पौधों के रासायनिक संदेश वाहक

हॉर्मोन

डॉ.किशोर पंवार

पौधे केवल लम्बाई और वज़न में ही नहीं बढ़ते। उनमें नए-नए अंग भी बनते हैं। पहले जहां पौधों पर पत्तियां ही पत्तियां होती हैं वहां उम्र बढ़ने पर उन पर फूल खिलते हैं और फल भी लगते हैं।

तो, आखिर एक नन्हे से निषेचित अण्डे से कैसे अरबों-अरबों कोशिकाएं, जड़, तना, पत्तियां, फूल-फल और बीज बनते हैं? इन सवालों में से कुछ के जवाब हमारे पास है और कुछ की बारीकियां हमें अभी भी पता नहीं हैं। हमें यह पता है कि पौधों का सामान्य विकास कई आन्तरिक और बाहरी कारकों के आपसी तालमेल एवं क्रियाओं पर निर्भर होता है। इनमें से एक प्रमुख आंतरिक कारक है पौधों में पाए जाने वाले रासायनिक संदेशवाहक यानी हॉर्मोन। हॉर्मोन वे पदार्थ हैं जो प्रायः एक स्थान पर बनते हैं और दूसरे स्थान पर प्रभाव डालते हैं। हम यहां पौधों के चार प्रमुख वृद्धि हॉर्मोन ऑक्सिन, जिबरेलिन, सायटोकाइनिन और एथिलीन की चर्चा करेंगे।

1. ऑक्सिन्स

ऑक्सिन वह हार्मोन है जिसकी खोज सर्वप्रथम हुई। वृद्धि नियंत्रकों से सम्बंधित प्रयोगों का सर्वप्रथम रिकॉर्ड चार्ल्स डार्विन और उनके पुत्र फ्रांसिस डार्विन के नाम है। इन्होंने 1881 में प्रकाशित अपनी पुस्तक *द पॉवर ऑफ मूवमेंट इन प्लांट्स* में इनकी जानकारी दी है। डार्विन ने सर्वप्रथम पौधों के प्रकाश की ओर झुकने सम्बंधी प्रयोग केनेरी घास और जई पर किए थे।

उन्होंने बताया कि जब अंकुर के सिरे वाले भाग को अपारदर्शी टोपी से ढंक दिया जाता है तो वह प्रकाश की ओर नहीं झुकता। परंतु यदि टोपी पारदर्शी हो तो पौधा प्रकाश की ओर झुक जाता है। इस प्रयोग से उन्होंने यह निष्कर्ष निकाला कि जब अंकुर को एक दिशा से प्रकाश दिया जाता है तो कुछ प्रभाव सिरे से नीचे की ओर बहता है जो नीचे वाले हिस्से को प्रकाश की ओर झुकाता है।

इसके बाद कई वैज्ञानिकों ने अंकुर से सम्बंधित मज़ेदार प्रयोग किए।

एक प्रयोग में देखा गया कि कटे हुए सिरे को काटकर अंकुर पर थोड़ा एक तरफ सरकाकर रख दिया जाए तो उस तरफ तने की वृद्धि ज़्यादा होती है और पूर्ण अंधकार में भी सिरा दूसरी ओर मुड़ जाता है। इससे यह पता चला कि अंकुर के कटे सिरे में कोई पदार्थ बनता है जो वृद्धि को प्रभावित करता है।

एक दिशा से प्रकाश मिलने पर असमान वृद्धि का कारण हॉर्मोन का असमान वितरण है। छाया वाले हिस्से में

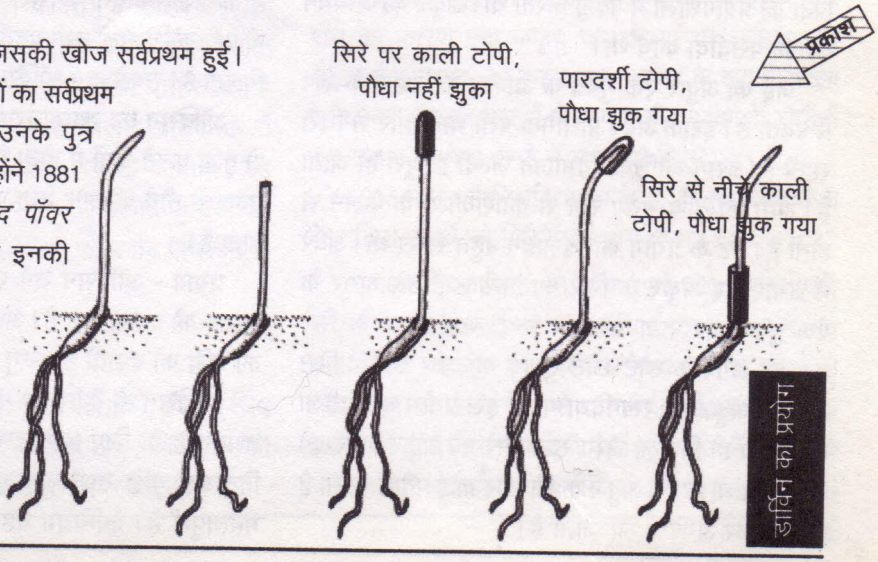

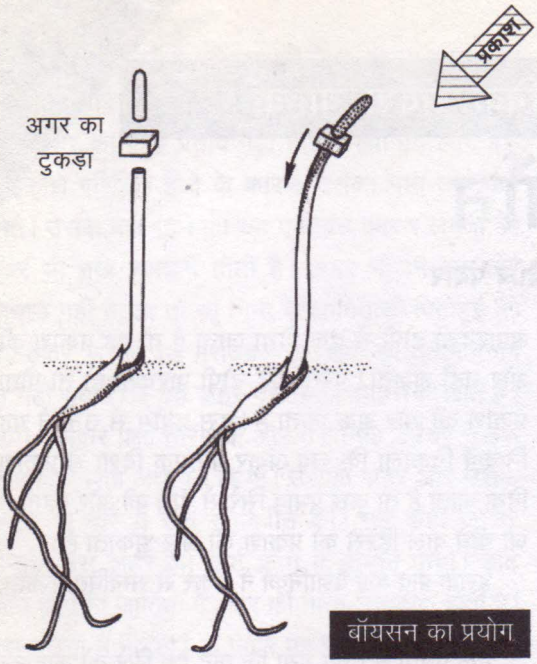

बॉयसन का प्रयोग

इस हॉर्मोन की मात्रा ज़्यादा होती है जिससे उस ओर की कोशिकाएं तेज़ी से बढ़ती हैं। फलस्वरूप अंकुर दूसरी ओर (प्रकाश की ओर) मुड़ जाता है। सिरे को सरकाकर रखने पर भी ऐसा ही होता है।

इस हॉर्मोन के बारे में अंतिम व तथ्यात्मक प्रमाण एक स्नातक विद्यार्थी एफ.डब्ल्यू. वेंट के प्रयोगों से मिले। वेंट डच सेना में कार्यरत एक विद्यार्थी था जो रात को अपने पिता की प्रयोगशाला में पढ़ाई करता था। अंकुर का अध्ययन उसका पसंदीदा कार्य था।

जई का अंकुर एक गुंबद के आकार की रचना के रूप में बढ़ता है। इसके अंदर प्राथमिक पत्ती चारों ओर से घिरी रहती हैं। इसमें कोशिका विभाजन जल्दी ही पूरा हो जाता है। आगे की वृद्धि मुख्य रूप से कोशिकाओं के फैलने से होती है। वेंट के प्रयोग की डिज़ाइन बहुत सरल थी। अंधेरे में उगाए गए अंकुर के सिरे काटकर उन्हें 3% अगर के एक टुकड़े पर रखा गया। 4 घण्टे बाद अंकुर के सिरे हटाकर अगर के छोटे-छोटे टुकड़े काटकर उन्हें वापिस कटे हुए अंकुर पर रख दिया गया। इस प्रयोग का नतीजा ठीक वैसा ही निकला जैसा स्वयं सिरे को अंकुर पर रखने से मिलता था। यानी अंकुर के सिरे पर कोई पदार्थ बनता है जो रिसकर अगर में आ जाता है।

वेंट द्वारा किए गए अन्य प्रयोगों से यह स्पष्ट तौर पर पता चला कि अगर के टुकड़े को अंकुर के कटे भाग पर एक तरफ रखा जाए तो वे अंधेरे में भी एक और मुड़ जाते हैं। वेंट ने ही इस पदार्थ का नाम ऑक्सिन रखा था।

ऑक्सिन की प्राप्ति - अंकुर में इसकी अत्यधिक कम मात्रा एवं पृथक्करण की विधियां न होने के कारण काफी लम्बे समय तक ऑक्सिन को अलग से प्राप्त करना संभव न हो सका। अंततः 1931 में कोग्ल और सिमिट इसे अलग करने में सफल हुए। ऑक्सिन को सर्वप्रथम एक डच मरीज़ के मूत्र से प्राप्त किया गया। इसे ऑक्सिन-ए नाम दिया गया। कोग्ल और सहयोगियों ने 1934 में ऐसा ही एक पदार्थ कॉर्न जर्म ऑयल से प्राप्त किया जिसे ऑक्सिन-बी नाम दिया गया। ये दोनों पदार्थ फिर कभी पृथक न किए जा सके।

मानव मूत्र में से कोग्ल और उनके साथियों और थीमन ने एक अन्य पदार्थ खोजा जिसे हिटेरो-ऑक्सिन नाम दिया गया। यह पूर्व में ज्ञात पदार्थ इन्डोलएसिटिक अम्ल के समान था। इन्डोलएसिटिक अम्ल अब कई पौधों से प्राप्त किया जा चुका है। और यही प्राकृतिक रूप से पाया जाने वाला ऑक्सिन है। इसकी 1 माइक्रोग्राम मात्रा प्राप्त करने के लिए 10,000 अंकुरों के सिरों की ज़रूरत पड़ती है।

पौधों में ऑक्सिन का वितरण - ऑक्सिन पौधों में व्यापक रूप से वितरित रहता है। हालांकि इसकी सर्वाधिक मात्रा जड़ तथा तनों के सिरों में पाई जाती है। यह विभाजित हो रही कोशिकाओं तथा बढ़ती पत्तियों में भी पर्याप्त मात्रा में मिलता है। सबसे कम ऑक्सिन वृद्धिहीन हिस्सों में होता है।

ऑक्सिन का स्थानांतरण - ऑक्सिन का निर्माण तेजी से वृद्धि करते अगों में होता है। इसका स्थानांतरण तनों में ऊपर से नीचे की ओर तथा जड़ों में नीचे से ऊपर की ओर होता है।

प्रभाव - ऑक्सिन तने तथा अंकुर में कोशिकाओं में फैलाव को बढ़ावा देता है। ऑक्सिन की अधिक सान्द्रता तने की वृद्धि को बढ़ाती है परन्तु जड़ों की वृद्धि को रोकती है।

ऑक्सिन ही कैम्बियम में कोशिका विभाजन के प्रारंभ तथा वृद्धि के लिए ज़िम्मेदार होता है। इसका यह प्रभाव द्वितीयक वृद्धि तथा ज़ायलम व फ्लोएम के विभेदन में महत्वपूर्ण है। कैम्बियम वह ऊतक है जो तने में मोटाई

बढ़ाने के लिए ज़िम्मेदार होता है। ऑक्सिन के कारण अस्थानिक तथा पार्श्व जड़ों का निर्माण भी बढ़ जाता है।

पौधों का एक खास लक्षण है कि यदि अग्रस्थ कलिका उपस्थित है तो पार्श्व कलिकाओं की वृद्धि रुक जाती है। अग्रस्थ कलिका को निकाल देने पर पार्श्व कलिकाओं की वृद्धि तेजी से होने लगती है। ऑक्सिन का निर्माण पौधे के अग्रस्थ हिस्से में होता है। यह नीचे जाकर पार्श्व कलिकाओं की वृद्धि पर रोक लगाता है। अग्र कलिका को तोड़ दिया जाए तो पार्श्व कलिकाओं की वृद्धि होने लगती है।

ऑक्सिन पतझड़ को रोक भी सकता है। कुछ पौधों में ऑक्सिन बीजरहित फलों के निर्माण को भी बढ़ावा देता है।

कई ऑक्सिनों के उपयोग से फल अधिक मीठे तथा स्वादिष्ट हो जाते हैं। गन्ने में ऑक्सिन के प्रयोग से शक्कर की मात्रा बढ़ जाती है। ऑक्सिन के उपयोग से पुष्पन क्रिया रुक जाती है। कुछ कृत्रिम ऑक्सिन (जैसे 2,4-डी) का उपयोग शाकनाशी की तरह किया जाता है। कुछ दो-बीजपत्री पौधों पर इनके छिड़काव से उनमें अति वृद्धि होती है और अंततः उनकी मृत्यु हो जाती है।

क्रियाविधि - ऑक्सिन द्वारा कोशिकाओं की वृद्धि की क्रियाविधि ठीक से पता नहीं है। ऑक्सिन के कारण कोशिका की दीवारों का लचीलापन बढ़ जाता है जिससे इनमें पर्याप्त खिंचाव होता है। आधुनिक प्रमाणों से स्पष्ट पता चलता है कि ऑक्सिन श्वसन को बढ़ाता है जिससे अधिक ऊर्जा उत्पन्न होती है और वृद्धि की क्रिया तेज़ हो जाती है। यह भी पता चला है कि ऑक्सिन पौधों में एथिलीन के उत्पादन को बढ़ाता है। संभव है कि ऑक्सिन का प्रभाव एथिलीन के माध्यम से भी होता हो।

2. जिबरेलिन

ये हॉर्मोन सम्पूर्ण पौधे में तने की लंबाई में वृद्धि के लिए उत्तरदाई होते हैं। लंबाई में वृद्धि के लिए विभाजन की क्षमता से लैस कोशिकाओं का होना आवश्यक होता है।

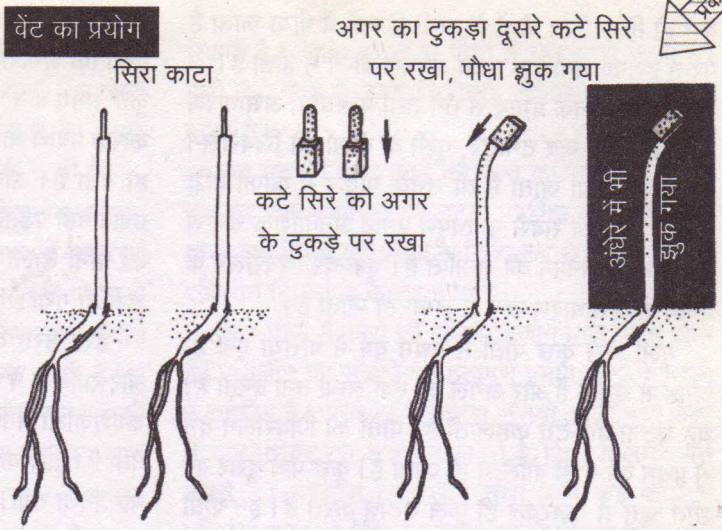

खोज - 1926 में जब वेंट ऑक्सिन को लेकर अपने प्रयोग कर रहे थे तब इ. कुरासावा जापान में चावल की एक बीमारी 'फूलिश सीडलिंग' पर काम कर रहे थे। इस बीमारी में पौधे एकदम लम्बे, पीले और कमजोर हो जाते हैं। कुरासावा ने पता लगाया कि इन लक्षणों का कारण चावल के पौधों पर लगने वाली एक फफूंद *जिबरेला फ्यूजीकुराई* से उत्पन्न एक रासायनिक पदार्थ है।

कुरासावा से पहले 1898 में एक जापानी किसान कोनिशी ने इसके बारे में जानकारी दी थी। इसे बकानी रोग के नाम से जाना जाता था। 1898 से 1910 के बीच होरी ने सबसे पहले इसका वैज्ञानिक अध्ययन किया था और रोग का कारण एक फफूंद को बताया था। इसके बाद 1926 में कुरासावा को कई असफलताओं के बाद जिबरेला के कल्चर से प्राप्त पदार्थों से चावल और मक्का के पौधों में इस लक्षण को पैदा करने में सफलता मिली।

1935 में टोक्यो विश्वविद्यालय के टी या बूटा ने जिबरेला के सक्रिय पदार्थ को जिबरेलिन नाम दिया।

जापानी में प्रकाशित होने के कारण 1950 तक पश्चिमी संसार जिबरेलिन की खोज से वंचित रहा। 1956 में जब इस पदार्थ को सेम से निकाला गया तब से लोगों में जिबरेलिन को लेकर फिर से रुचि पैदा हुई। अब यह पता है कि यह हॉर्मोन लगभग सभी पौधों में मिलता है। अब तक चालीस विभिन्न प्रकार के जिबरेलिन प्राप्त किए जा चुके हैं।

वैसे तो जिबरेलिन पौधों के सभी हिस्सों में पाया जाता है परन्तु इसकी सर्वाधिक मात्रा अधपके बीजों में होती है।

प्रभाव - इनके प्रभाव से तने तथा पत्तियों में असाधारण वृद्धि होती है। जब टमाटर, मूली के बीजों को जिबरेलिन के साथ उगाया जाता है तो उनके प्रांकुर में काफी वृद्धि होती है। इसका सबसे महत्वपूर्ण प्रभाव अनुवांशिक रूप से बौने पौधों में बौनेपन की समाप्ति है। चुकन्दर जिबरेलिन के प्रभाव से असाधारण रूप से लम्बा हो जाता है।

मूली जैसे कुछ पौधों में प्रथम वर्ष में पत्तियां एक ही जगह से उगती हैं और अगले वर्ष एक लम्बा तना बनता है। यह घटना बोल्टिंग कहलाती है। पौधों को जिबरेलिन देने से प्रथम वर्ष में ही बोल्टिंग हो जाता है। कुछ पौधे दूसरे वर्ष शीत ऋतु से गुज़रकर ही फूल उत्पन्न करते हैं। इन पौधों को जिबरेलिन की मदद से प्रथम वर्ष में पुष्पन के लिए तैयार किया जा सकता है। टमाटर, सेव, खीरा आदि में जिबरेलिन उपचार द्वारा बीजरहित फल भी प्राप्त किए जा सकते हैं।

कुछ प्रकाश संवेदी बीज (जैसे लेक्टयूका, जौं) जिबरेलिन उपचार द्वारा पूर्ण अंधकार में भी अंकुरित हो जाते हैं। इसी तरह आलू के कन्द की सुप्तावस्था भी जिबरेलिन उपचार द्वारा समाप्त की जा सकती है।

कार्यविधि - इनकी क्रियाविधि को समझने के लिए शोध जारी है।

3. सायटोकाइनिन्स

एक डच वनस्पतिशास्त्री जोहानेस वान ओवरबीक ने देखा कि नारीयल पानी में एक ऐसा वृद्धि कारक पदार्थ है जो पौधों के भ्रूण की वृद्धि को तेज़ कर देता है और मृत पौधों से अलग किए गए ऊतकों को कृत्रिम पोषक माध्यम में टेस्ट ट्यूब में बढ़ने देने में सहायक है।

ओवरबीक की इस नई खोज के दो स्पष्ट प्रभाव हुए। पहला, पौधों के ऊतक और अंगों के संवर्धन के प्रयोग बढ़े और दूसरा, पौधों में एक नए वृद्धि कारक की खोज का मार्ग प्रशस्त हुआ।

जिस कृत्रिम पोषक माध्यम में ऊतकों का संवर्धन किया जाता है उसमें शर्करा, विटामिन और खनिज लवण होते हैं। फोक स्कूग और साथियों ने विस्कॉन्सिन विश्वविद्यालय में तम्बाकू के तने का संवर्धन ऐसे पोषक माध्यम में करते हुए देखा कि शुरुआत में तो तने की वृद्धि ठीक होती है परन्तु कुछ समय बाद रुक जाती है। ऐसा लगता है कि कोई वृद्धि कारक पदार्थ था जो तम्बाकू के ऊतक में पहले था वह खर्च हो गया है। और ऊपर से ऑक्सिन डालने का भी कोई प्रभाव नहीं पड़ता। परन्तु जब इस पोषक माध्यम में नारीयल का पानी डाला गया तो कोशिकाओं में फिर से विभाजन शुरू हो गया।

इसी तरह कार्नेल विश्वविद्यालय के एफ.सी. स्टूवार्ड और साथियों ने देखा कि नारीयल पानी गाजर की परिपक्व कोशिकाओं में फिर से विभाजित होने की क्षमता पैदा कर देता है। वृद्धि कारकों के इस नए समूह को सायटोकाइनिन नाम दिया गया।

कई सालों की मेहनत के बाद इस पदार्थ को पहचाना गया और प्यूरीन नाम दिया गया। परन्तु इसे अलग करना संभव न हुआ।

स्कूग और साथियों को अंततः सफलता मिली और शीघ्र ही उन्होंने डी.एन.ए. के पुराने नमूनों से इस नए वृद्धि कारक को अलग कर लिया और इसे नाम दिया काइनेटिन। यह पौधों में प्राकृतिक रूप से नहीं पाया जाता। एक प्राकृतिक सायटोकाइनिन मक्का के दानों में खोजा गया जिसे जीएटिन नाम दिया गया। अब तक 40 से भी अधिक पौधों में सायटोकाइनिन का पता लगाया जा चुका है। ये सक्रिय रूप से विभाजित होने वाले हिस्सों जैसे बीज, फल और जड़ों से मिलते हैं।

प्रभाव - सायटोकाइनिन्स का सर्वाधिक महत्वपूर्ण कार्य कोशिका विभाजन में वृद्धि है। बीजपत्र में साइटोकाइनिन कोशिका वृद्धि को प्रभावित करता है। सोरोकिन तथा सहयोगियों के अनुसार यह कैम्बियम का निर्माण आरम्भ करता है। साइटोकाइनिन्स पौधों में अंग एवं ऊतकों के निर्माण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। ये ऑक्सिन से उपचारित कलमों में जड़ के निर्माण को रोकते हैं।

सायटाकाइनिन के प्रभाव से पार्श्व कलिकाओं की वृद्धि होती है चाहे अग्रस्थ कलिका उपस्थित रहे। इस प्रकार साइटोकाइनिन ऑक्सिन के प्रभाव को समाप्त कर देता है। साइटोकाइनिन्स अनेक बीजों में सुप्तावस्था को समाप्त कर उनके अंकुरण में वृद्धि करते हैं। वृद्धावस्था में पत्तियों का

क्लोरोफिल समाप्त हो जाता है, वे पीली पड़ जाती है, प्रोटीन का अपघटन होता है तथा पत्तियां अंततः गिर जाती हैं। साइटोकाइनिन्स से इसे रोका जा सकता है। इसके प्रभाव से पत्तियां अधिक समय तक हरी बनी रहती हैं।

क्रियाविधि - इस बात के प्रमाण हैं कि साइटोकाइनिन्स, न्यूक्लिक अम्ल के निर्माण तथा प्रोटीन संश्लेषण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। पाया गया है कि इस हॉर्मोन के प्रयोग से अमीनो अम्ल, अकार्बनिक फॉस्फेट, शर्करा तथा अन्य पदार्थ एकत्र होने लगते हैं। इससे वृद्धावस्था रुक जाती है। ये पतझड़ के समय प्रोटीन अपघटन को रोकते हैं। मगर यही कहना ठीक होगा कि इनकी क्रियाविधि व समुचित ज्ञान अभी हमारे पास नहीं है।

4. एथिलीन

सरल हायड्रोकार्बन एथिलीन के प्रभावों को सबसे पहले एक रूसी वैज्ञानिक नेल्जुबोव ने देखा था। 1901 में उसने बताया कि एथिलीन पीले मटर के बीजांकुर में तिहरा प्रभाव पैदा करती है। इसमें तने की लंबाई में वृद्धि को रोकना, तने की मोटाई में वृद्धि और तने का ज़मीन के समान्तर हो जाना शामिल है।

1910 में कसिन ने जमैका सरकार को सलाह दी कि सन्तरे और केले जहाज़ पर एक साथ नहीं भेजना चाहिए क्योंकि कोई अनजाना वाष्पशील पदार्थ कच्चे केलों को जल्दी पका देता है। इसके बाद कई शोधकर्ताओं ने बताया कि एथिलीन कई फलों को जल्दी पकने के लिए प्रेरित करती है। बहुत से शोधकर्ताओं ने प्रयोगों के आधार पर यह जानकारी दी कि एथिलीन पौधों के कई हिस्सों विशेषकर गूदेदार फलों से निकलती है।

इसके बावजूद इस गैस को हार्मोन के रूप में मान्यता बड़ी मुश्किल से मिली। अव्वल तो यह एक गैस है। अतः इसका उत्पादन, संग्रह तथा संचरण इसे हार्मोन मानने में समस्या पैदा करते हैं। अन्य हार्मोन की तरह इसका सीधा संचरण भी नहीं होता।

प्रभाव - यह तने तथा जड़ों की लम्बवत वृद्धि को रोकती है। इसके प्रभाव से पौधों में सूजन आ जाती है। मूली जैसे पौधों में जड़ों की मोटाई एथिलीन के कारण ही बढ़ती है।

यह मटर व अन्य पौधों की पार्श्व कलिकाओं की वृद्धि रोककर शीर्ष प्रभाविता की घटना प्रदर्शित करती है। ऐसा माना गया है कि यह प्रभाव आंशिक रूप से ऑक्सिन द्वारा एथिलीन निर्माण के कारण होता है।

कुछ पौधों में फलों की वृद्धि एथिलीन द्वारा प्रेरित होती है। एथिलीन का सर्वाधिक महत्वपूर्ण प्रभाव फलों के पकने में सहयोग है। एथिलीन के कारण पत्तियों, फूलों तथा फलों में एक पृथक्करण क्षेत्र बन जाता है जिसे विलगन पर्त कहते हैं। अनन्नास तथा आम तथा अन्य कई पौधों में एथिलीन पुष्पन को प्रेरित करती है। यह बीजों तथा कलिकाओं की सुप्तावस्था को समाप्त करती है। यदि एथिलीन ज़्यादा हो तो फूल की पंखुड़ियां खुल नहीं पातीं क्योंकि इसके प्रभाव से पंखुड़ी का बाहरी हिस्सा तेज़ी से बढता है।

एथिलीन पत्तियों में पीलापन तथा पतझड़ को बढ़ाती है। मोहनराम और जायसवाल के अनुसार केनाबिस तथा पपाया में एथिलीन के प्रयोग से मादा फूल अधिक उत्पन्न होते हैं। यह कई तरह के फूलों का रंग भी उड़ा देती है।

इन चार वृद्धि नियंत्रकों के अलावा भी कुछ अन्य वृद्धिकारक पदार्थ पौधों में होते हैं। इनमें विटामिन्स भी शामिल है जो पौधों की सामान्य वृद्धि के लिए आवश्यक हैं। कई पानी में घुलनशील विटामिन जैसे थायमिन, रिबोफ्लेविन तथा निकोटिन बड़े महत्वपूर्ण है। कुछ लोग तो ऑक्सीजन और कार्बन डाय ऑक्साइड को भी वृद्धि नियंत्रक मानते हैं हालांकि ये हार्मोन नहीं हैं।

इस तरह हम पाते हैं कि वनस्पति हार्मोन का कार्यक्षेत्र विस्तृत होता है। एक ही हार्मोन कई तरह के प्रभाव दर्शाता है। शीर्ष प्रभाविता ऑक्सिन और एथिलीन दोनों का गुण है। बीजरहित फलों के निर्माण में ऑक्सिन के अलावा जिबरेलिन की भी भूमिका होती है। अतः कुल मिलाकर यह कहा जा सकता है कि पौधों की वृद्धि एवं विकास कई हार्मोन के आपसी तालमेल से नियंत्रित होता है। *(स्रोत फीचर्स)*